AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

बौद्ध दर्शन का वर्ण व्यवस्था पर प्रभाव

ORIGINAL ARTICLE

Author
सरिता कुमारी
इतिहास विभाग
बिनोवा भावे विश्वविद्यालय
हजारीबाग, झारखंड, भारत

शोध सार

वैदिक काल की उपलब्धि समाज का वर्गीकरण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) रही है। इसमें जो वर्ग सबसे पहले आता है उन्हें सबसे अधिक अधिकार, संपन्न तथा स्वच्छ (शुद्ध) माना गया है जबकि निम्न वर्ग के लोग समाज में सेवक के रूप में रहते हुए अपनी सुरक्षा को लेकर संघर्षरत रहे जिस वजह से वैदिक काल के इस वर्णभेद ने एक अंतर्कलह को जन्म दिया। इससे पीड़ित लोगों ने एक नये मत या धर्म की तलाश शुरू की। इसी बीच छठी शताब्दी ई. पू. कई धर्मों का उदय हुआ, इनमें एक बौद्ध धर्म भी है। आचार्य नरेंद्र देव का कथन है कि जिस वक्त भगवान बुद्ध का जन्म हुआ उस समय विचार जगत में भारी उथल–पुथल थी। ब्राह्मण और श्रमिक दोनों में ही विचार चर्चा चल रही थी। भारत में पिछले 2600 वर्षों से बौद्ध धर्म का पालन किया जा रहा है जिस वजह से समाज में इसका गहरा और क्रांतिकारी प्रभाव पड़ा। जिस वक्त भारत में बौद्ध धर्म का उदय हो रहा था उस काल तक देश में कोई श्रेष्ठ शक्तियां नहीं थीं। बौद्ध दर्शन ने वर्ण व्यवस्था का कड़ा विरोध किया है। बौद्ध ग्रंथों में वर्ण व्यवस्था को जहां मानव निर्मित संस्था के रूप में देखा गया है, वहीं ब्राह्मणवाद ने इसे ईश्वर निर्मित संस्था बताया है। बौद्ध दर्शन ने कर्मकांडों को चुनौती दी तथा धार्मिक पाखंड का पुरजोर विरोध किया। इस धर्म ने करुणा और मैत्री को जीवन का चरम सिद्धांत घोषित करते हुए संस्कृत की जगह लोकभाषा पाली को महत्व दिया गया। पालि भाषा और साहित्य के विशेषज्ञ डा. भरत सिंह उपाध्याय अपने शोध में बताते हैं कि संतों की साधना में मौजूद 'सतनाम' पालि का सच्चनाम है जो तथागत बुद्ध का एक नाम ही है। बुद्ध ने हिन्दू धर्मशास्त्र को न केवल चुनौतियां दी थीं, बल्कि मानवता के अपने संदेश से न सिर्फ भारतीय बल्कि चीन, म्यांमार, थाईलैंड, वियतनाम, कोरिया और जापान तक को प्रभावित किया था। इस धर्म ने समाज में व्याप्त दबे कुचले लोगों को सामाजिक, धार्मिक आजादी दिलवाई। बौद्ध शब्दावली अरहंत शब्द का प्रयोग हुआ है, जिसका एक रूप है अर्हता। अर्हता का अर्थ है– जो योग्य है, जो पूज्य है। ऐसे में हम देखते हैं कि दुनिया में भारत की ख्याति पहली बार किसी महापुरुष ने दिलाई थी तो वो तथागत बुद्ध ही थे। बुद्ध ने बगैर दुख का समाज बनाने का सपना देखा था जिसे सम्राट अशोक व्यवहार में लाए। बुद्ध के काल में जाति व्यवस्था नहीं थी, गण की व्यवस्था थी, कुल की भी व्यवस्था थी।

मुख्य शब्द

बौद्ध, धर्म, दर्शन, वर्ण व्यवस्था,सामाजिक स्थिति.

भूमिका

भारतीय इतिहास में वर्णव्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान है, जो सामाजिक विभाजन के रूप में वैदिककाल से

लेकर आजतक संपूर्ण भारत में दिखाई देती है। वर्ण व्यवस्था का प्रारंभ संभवतया मानव की मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया गया था जिसका उद्देश्य सामाजिक व्यवस्था एवं संगठन को स्थायित्व सौंपना था। सर्वप्रथम ऋग्वेद के 10वें मंडल 'पुरुषसूक्त' से हमें चार वर्णों की उत्पति की स्पष्ट जानकारी मिलती है। इसमें दिया गया है किः

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायतः।।[1]

अर्थात् आदि पुरुष (ब्रह्मा) के मुख (मुंह) से ब्राह्मण, बाहू (बांह) से राजन्य (क्षत्रिय) जांघ से वैश्य और पैरों से शूद्रों की उत्पति हुई है। लेकिन इस समय वर्णव्यवस्था जन्म पर आधारित नहीं होकर कर्म पर आधारित था। जैसा की ऋग्वेद में कहा गया है किः

कारुरहं ततो भिषगुपलप्रक्षिणी ननाा।
नानाधियो वसूयवोऽनु गा इव तस्थिम।।[2]

अर्थात् मैं कवि हूं मेरे पिता एक वैद्य हैं और मेरी माता आटा पीसती हैं। अलग–अलग व्यवसाय करते हुए भी हम साथ–साथ रहते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि वर्ण व्यवस्था वंशानुगत नहीं थी। समाज में वर्ग भेद व्यापक हो चला था। इस काल में संभ्रात परिवार के लोग दास और कर्मकारों को सबसे नीचे स्तर पर रखते थे। बौद्ध समाज जाति आधारित न होकर नाते रिश्तों पर आधारित था, क्योंकि जातियां उस समय थी ही नहीं। उस समय तक समाज पूरी तरह से विकसित हो चुका था। हालांकि बाद में इस वर्ण व्यवस्था ने जाति व्यवस्था का रूप ले लिया। अब यह कर्म के आधार पर निर्धारित की जाने लगी। समाज में उच्च वर्णों का वर्चस्व स्थापित हुआ। ब्राह्मणों ने यज्ञ और मंत्रोचारण की प्रविधि द्वारा अपने आप को उच्च स्थानों पर स्थापित किया। इसके पश्चात् क्षत्रियों का स्थान था, जबकि तीसरा वर्ग वैश्य था जो उत्पादक और करदाता के रूप में समाज में विद्यमान था जिसे शतपथ ब्राह्मण में 'अनस्थबलिकृता' कहा गया है। इस काल में सबसे खराब स्थिति शूद्रों की थी जिनका कार्य तीनों वर्णों की सेवा करना था। ये वर्ग धार्मिक और कानूनी अधिकारों से वंचित थे। ये समाज के निम्नतम स्थान में धकेल दिए गए थे। उपनयन संस्कार का अधिकार भी इन्हें प्राप्त नहीं था।[3]

बौद्ध धर्म ने वर्ण व्यवस्था का विरोध करते हुए समाज के दबे कुचले लोगों के लिए सभी द्वार खोल दिए। इतना ही नहीं इस धर्म में प्रवेश पानेवालों को सम्मान दृष्टि से देखा जाता था। बौद्धों को मनुष्य के उच्च जन्म में विश्वास नहीं था। उन्हें केवल चरित्र की चिंता थी। इस धर्म को वैश्यों और शूद्रों ने स्वाभाविक रूप से अपनाया।[4] हालांकि बौद्ध ग्रंथों में भी चार वर्ण तथा उनके चार कार्यों का उल्लेख हैं।[5] लेकिन समाज का बौद्ध भिक्षु वर्ग इस व्यवस्था का विरोधी था। वह इसका आधार जन्म न मानकर कर्म को मानता है। बुद्ध ने स्वयं कहा है कि ब्रह्माणी माता के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण किसी को ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता है।[6] ब्राह्मण तो वह है जिसमें बुराइयां न हों तथा वह संसार के बुरे परिणाम तथा निस्सरण को जानता हो। ब्राह्मण होने से किसी का आदर नहीं किया जा सकता है, बल्कि उसके अच्छे कर्मों के कारण उसका आदर होता है।[7] बौद्ध दर्शन ने अहिंसा सभी जीवों के प्रति प्रेम और सहानुभूति तथा जाति पंथ, वर्ण सभी के प्रति समानता स्थापित करने का उपदेश दिया। इसमें जाति व्यवस्था पर आधारित पारंपरिक हिन्दू सामाजिक संरचना को प्रभावित किया। निःसंदेह बौद्ध दर्शन का उद्देश्य व्यक्ति को मोक्ष या निर्वाण से सुरक्षित करना था। पुराने सामंतवादी समाज के विघटन और निजी संपत्ति के कारण खुद को मुश्किल पड़ रहा था। उनके लिए कुछ रास्ते बनाए गए।[8] बौद्ध धर्म ने अपने दरवाजे को महिलाओं और शूद्रों के लिए खुला रखकर समाज पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव डाला। ब्राह्मणवाद अंतर्गत महिला और शूद्र को एक ही श्रेणी में रखा गया था। वे न तो जनेऊ धारण कर सकते थे और न ही उन्हें वेद पाठ की अनुमति थी। बौद्ध धर्म को अपनाने से उन्हें उनकी इस निम्न पहचान से मुक्ति मिली।[9] बौद्ध धर्म एक तरह का नास्तिक धर्म है, यह कर्म को अधिक महत्व देता है। बुद्ध कहते हैं कि सारी खोज के बाद मुझे कोई ईश्वर तो नहीं मिले, लेकिन मुक्ति का मार्ग जरूर मिल गया। बुद्ध ने कर्म की व्याख्या की है। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि मनुष्य अपने लिए संसार का निर्माण करता है,

जो उसके कर्मों का परिणाम है।[10] बुद्ध ने ब्राह्मणों की जाति के वर्चस्व के खिलाफ लोगों का स्वागत किया था। 10वीं–15वीं शताब्दी में चले भक्ति आंदोलन के दौरान हर किसी ने अपने धर्म में निचली जातियों और अछूतों की जरूरत को समझा। महात्मा बुद्ध और श्रमिक बगैर किसी जाति भेदभाव किए भिक्षाटन किया करते थे। इसका प्रमाण है कि मगध के राजा बिम्बिसार के यहां भोजन करने वाले महात्मा बुद्ध ने निर्वाण के पहले अंतिम भोजन चुन्द लोहार के घर किया था। उनके परम शिष्य आनंद ने भी अछूत माने जानेवाली किशोरी चाणलिक के मिट्टी के घड़े से दिया गया पानी पिया था।[11] बुद्ध के विचारों का प्रभाव की वजह से अनेक दलित और नीचे के जातियों में अपनी चारित्रिक उच्चता और साधना के बल पर बुद्धत्व को प्राप्त किया। यह विचार ही थे जिसके बल पर दलित और निम्न जातियों को मनोवैज्ञानिक रूप से आत्मविश्वास बढ़ा तथा इन्होंने बढ़चढ़ कर सामाजिक कार्यों में हिस्सा लिया। महात्मा बुद्ध के समय से लेकर मौर्यकाल तक बौद्ध धर्म का विशेष प्रचलन होने के कारण वैदिकालीन वर्ण व्यवस्था पर विशेष आघात हुआ। मूलरूप से देखा जाए तो बौद्ध धर्म की उत्पति का कारण ही वैदिक वर्ण व्यवस्था का विकृत स्वरूप था, जिसमें ब्राह्मणों को विशेषाधिकार प्राप्त था तथा वैश्य व शूद्र आदि निम्न जातियों का उत्पीड़न और शोषण किया जाता था। इसी की प्रतिक्रिया थी जो बौद्ध धर्म में ब्राह्मणों का स्थान क्षत्रियों ने ले लिया।[12] वास्तव में बौद्ध धर्म ने जाति प्रथा का कड़ा विरोध किया गया। दिव्यावदान में दिया गया है कि मनुष्यों में पैर, हाथ, मांस, नख, जांघ पार्श्व तथा पृष्ठ समान रूप हैं। ऐसा कोई भी तो विशेष अंग नहीं जिसके आधार पर वर्णों को अलग–अलग विभाजन किया जा सके।[13] बौद्ध साहित्य में वर्ण व्यवस्था का स्वरूप जन्म पर न होकर कर्म का आधार पर स्वीकार किए गए हैं। अर्थात् जो भी व्यक्ति पंडित, तपस्वी तेजस्वी एवं सदाचारी होगा वहीं ब्राह्मण पद का वास्तविक अधिकारी है।[14] वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था से उपेक्षित वर्ग ने अपनी सुरक्षा को लेकर एक नये धर्म की तलाश शुरू की। इसी बीच छठी शताब्दी ई. पू. गंगा के किनारे कई धर्मों का उदय हुआ। इनमें बौद्ध धर्म एक था, जो वैदिक धर्म का विरोधी था।[15] इस काल में गंगा के मैदानी भाग में लोहे का भारी पैमाने पर प्रयोग शुरू हुआ। इसके साथ ही कृषि संबंधित उपकरण और बड़े–बड़े नगर की स्थापना हुई। कृषि उपकरण के प्रयोग से कृषि में उन्नति हुई। इसके साथ ही शिल्प और व्यापार में नई ऊंचाई मिली। इस वजह से वर्ण व्यवस्था के तीसरे वर्ग वैश्यों की स्थिति में व्यापक सुधार आया। उनका समाज में सम्मान बढ़ा। ऐसी स्थिति में वर्ण व्यवस्था का चौथा वर्ग शूद्र एक विशेष धर्म की तलाश में थे, उन्हें समाज में उचित सम्मान मिले तथा उनकी स्थिति में सुधार हो इसकी चाहत लंबे समय थी। ऐसे में धार्मिक क्रांति में बौद्ध धर्म ने न केवल शूद्रों बल्कि वैश्यों को भी अपनी और आकर्षित किया। बौद्ध धर्म ने सामाजिक वर्गीकरण बंटवारे के खिलाफ सभी मनुष्यों के कल्याण का दर्शन था।[16] ऐसे में वैश्य और शूद्रों ने सामाजिक, आर्थिक कारणों से बौद्ध धर्म को अपनाया।[17] इस धर्म में विश्व की सभी जातियों को एक जाति के रूप में देखता है।[18] वर्ण व्यवस्था के तहत जिस महिला समाज को पुरुष के समान धार्मिक स्तर की मान्यता देने से इन्कार किया गया था। उन्हें बौद्ध धर्म में बौद्ध संघ में प्रवेश की अनुमति दी गई।[19] बुद्ध की शिक्षा ने स्त्रियों को उन्हें एक भिन्न स्थिति प्रदान की। माना जाता है कि बुद्ध के समय जो दर्शन प्रमुख था वह पुरुषवादी था।[20]

बौद्ध के प्रारंभिक अवस्था के पहले मगध का आर्यावत से बाहर का देश माना गया था। ऐसे में बनारस के समीप बहनेवाली नदी कर्मनाशा के बारे धारणा यह बन गई थी कि जो व्यक्ति नदी को पार उस किनारे जाएगा उसका संपूर्ण कर्म फल नष्ट हो जाएगा। मगध को 'व्रात्या' देश रूप में माना गया। ऐसे में नदी के इस किनारे बसे लोगों को वर्ण व्यवस्था के तहत हेय दृष्टि से देखा जाता है जिस कारण यहां के लोगों ने वैकल्पिक धर्म बौद्ध को अधिक से अधिक संख्या में अपनाया।[21] पूर्वी भारत में बौद्ध धर्म फलने–फूलने का मूल कारण यहां ब्राह्मणों के प्रभाव का कम होना भी माना जाता है।[22] यही नहीं बौद्ध धर्म के भिक्षुओं ने असभ्य और वन में रहनेवाले वासियों के प्रति का दया, मैत्री और करूणा का भाव रखते हुए उन्हे सुसभ्य बनाया। इस वजह से भिक्षुओं ने कल्याण के कार्य में कभी भी अपने प्राणों की चिंता नहीं की।[23] बौद्ध धर्म के ही प्रभाव का परिणाम रहा है कि नंदवंशीय शासक जो नाई का बेटा होने के बाद भी न केवल शासक बना बल्कि विशाल साम्राज्य की स्थापना की। यह पहली बार था जब एक शूद्र पुत्र ने वर्ण व्यवस्था के कानून को तोड़ते हुए ओडिसा से पंजाब तक अपना शासन किया। चंद्रगुप्त मौर्य जैन धर्म को माननेवाला था जिसके नाती सम्राट अशोक ने जैन धर्म के साथ अन्य धर्मो को भी फलने फूलने का खूब

मौका दिया। भारतीय इतिहास में यह पहली बार था जब न्याय और दंड के क्षेत्र में बगैर वर्णगत भेदभाव किए एकरूपता स्थापित की गई।[24] एक बार बुद्ध वैशाली में थे तब भाद्दिय लिच्छवी ने पूछा था कि भगवान लोग कहते हैं कि बुद्ध जादू टोटका के ज्ञानी हैं। इसकी मदद लेकर वो अपने धर्म की ओर लोगों को आकर्षित करते हैं तब तथागत ने उत्तर दिया था कि आज जो लोग मुझ पर इस तरह के आरोप लगा रहे हैं वो महत्वकांक्षी है तथा मेरी शैली को जो जादू टोटका कहते हैं। उसका परिणाम विश्व के सुख और कल्याण में होगा।[25]

बुद्ध ने मूर्तिपूजा का विरोध किया तथा स्तूप आदि बनाकर उनके उपदेशों पर ही चिंतन करने पर बल दिया।[26] मगध में जब काफी लोगों ने बौद्ध धर्म को अपनना शुरू किया तो इसे देख विद्रोही खेमें ने आरोप जड़ा कि बुद्ध सुखी परिवार को तोड़ रहे हैं।[27] एक बार बुद्ध ब्राह्मणों के एकनाला गांव में काशी भारद्वाज ब्राह्मणों के समीप खड़े हुए थे। इस दौरान भारद्वाज ने कहा था कि मैं खाने से पहले जोतता हूं, बोता हूं तब खाता हूं। बुद्ध ने भी कुछ इसी तरह उत्तर दिया था। उन्होंने कहा था बीज पर मेरी निष्ठा है। ऐसे में यह देखा जाए कि बौद्ध धर्म को प्रारंभिक काल में काफी संघर्ष करना पड़ा था।[28] श्रमक अवैदिक थे। ये वेद के प्रमाण को स्वीकार नहीं करते थे। वे यज्ञ आदि क्रियाकलापों को अधिक महत्व नहीं देते थे। ब्राह्मण और श्रमक की परंपरा अति प्राचीन काल से चली आ रही है। बौद्ध धर्म के विकास के बाद वर्ण धर्म के बंधन शिथिल हुए। खुद बुद्ध ने नातेदारी की ताकत को पहचाना, बंधन और इन संबंधों के कारण भिक्षुओं की तरह कई विनय नियमों में ढील दी थी। उन्होंने अपने परिजनों के साथ संपर्क में रहने की छूट दी थी। बौद्ध धर्म ने मठों की स्थापना के साथ आमलोगों को अपना अनुयायी बनाना शुरू किया। इसके परिणामस्वरूप ब्राह्मणों के बीच संप्रदाय की प्रतियोगिता शुरू हुई जिस वजह से पुष्यमित्र शुंग जैसे कट्टर ब्राह्मणवादी सेनापति बन चुके थे। यज्ञों का संपादन कर स्वर्ग प्राप्ति को मानने वाले वर्णाभिमानियों को बौद्ध धर्म का बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय उपदेश ठीक नहीं लगने लगा था जिस कारण पुष्यणमित्र शुंग ने मौर्य सम्राट बृहद्रथ के प्रति विश्वासघात कर उसका वध करते हुए खुद को शासक बन बैठा। वर्ण व्यवस्था स्थापित करने के लिए आतंक का सहारा लिया गया। बौद्ध भिक्षुओं की हत्या और दमन करने के लिए राजा की आज्ञा से पुरस्कृत किए गए।[29] उसने बौद्ध बिहारों को भी नष्ट किया। कुमारिल और बौद्ध धर्म का विरोध काफी चर्चित रहा है। माना जाता है कि माध्यमिक दर्शन नागार्जुन का वध एक ब्राह्मणवर्णी सातवाहन राजा ने किया गया था।[30] बौद्ध के सबसे बड़े शत्रु में कुमारिल भट्ट (c.750 C.E.) और शंकर का नाम शामिल है। ये दोनों बहुत विद्वान धार्मिक शिक्षक थे। हिन्दू जाति पदानुक्रम के खिलाफ आंदोलन ने जनता के बीच जागरूकता पैदा की उनके अधिकारों के बारे में और यह कि उच्च जाति की इच्छा पर उनका दमन किया गया प्रचार किया गया। जाति भेद के बारे में प्राचीन वासेट्ठसुत्त (सुत्तनिपात और मज्झिमनिकाय) में जानकारी मिलती है कि जिसमें बताया गया है कि इच्छानंगल गांव में कई ब्राह्मण रहते थे। इनमें वशिष्ठ एवं भारद्वाज नामक दो युवा ब्राह्मण थे। इन दोनों ब्राह्मणों में इस बात को लेकर मतभेद था कि मनुष्य जन्म से श्रेष्ठ होता है या कर्म से। भारद्वाज का तर्क था जिसके पीढ़ी दर पीढ़ी वर्णसंकर नहीं हुआ है वह श्रेष्ठ ब्राह्मण है जबकि वशिष्ठ का कहना था कि जो मनुष्य शीलवान, कर्तव्यनिष्ठ हो उसे ब्राह्मण कहा जाना चाहिए।[31] जब दोनों के तर्क का कोई सार्थक अर्थ नहीं निकला तो दोनों ब्राह्मणों ने समीप रह रहे बुद्ध के समीप पहुंचे तथा मुनी गौतम को अपना परिचय देते हुए कहा कि ये भारद्वाज तारूक्ष्य के शिष्य हैं जबकि में वशिष्ठ पौष्करसारी का शिष्य हूं। हम दोनों में जाति भेद को लेकर मतभेद है। भारद्वाज का कहना है कि ब्राह्मण कर्म से महान होता है और मैं कहता हूं जन्म से होता है। हमारे विवाद का हल आप निर्णय किजिए बुद्ध। गौतम ने पूरी बात सुनने के बाद कहा कि वशिष्ठ वनस्पति, वृक्ष, कीड़े मकोड़े में अनेक जातियां होती है लेकिन मनुष्यों में यह नहीं है। सभी मनुष्यों में लगभग सभी अंग समान होते हैं। यदि कोई मनुष्य गाय चराता है तो वह ब्राह्मण नहीं ग्वाला कहलाएगा। शिल्प कला से आजिविका चलानेवाला कारीगर कहलाएगा। इसी तरह व्यापार करनेवाला बनिया, चोरी करने वाला चोर कहलाएगा लेकिन इनमें किसी को जन्म के ब्राह्मण नहीं कहा जा रहा सकता है। जन्म से किसी भी व्यक्ति को ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता है।[32] बुद्ध के दर्शन को वर्णनवादी लोगों को कभी नहीं माना। इसका स्पष्ट उल्लेख विष्णु पुराण में दिखता है।[33]

निष्कर्ष

भारत के वर्तमान समय में बौद्ध धर्म अल्पसंख्यक धर्म हैं, लेकिन आज भी बौद्ध धर्म भारतीय जनमानस पर गहरा प्रभाव है। बौद्ध दर्शन के द्वार सभी जाति, लिंग और पंथ के लिए खुले थे। इस कारण संघ में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जैसे वर्ण और जातियों के लोग इस धर्म में बढ़ चढ़कर शामिल हुए थे। हालांकि, सैनिक, दास और कर्जदार को संघ में शामिल नहीं होने का नियम नहीं था। बौद्ध दर्शन के तीन प्रमुख तत्व बुद्ध, धम्म और संघ के नियमों और कानूनों का पालन ईमानदारी से करना पड़ता था। बौद्ध दर्शन के चार आर्यसत्य है जिसमें:

(क) संसार दुःखों से परिपूर्ण है अर्थात् दुःख।

(ख) दुःखों का कारण भी है अर्थात् दुःख समुदाय।

(ग) दुःखों का अंत संभव है अर्थात् दुःख का विरोध।

(घ) दुःखों के अंत का मार्ग है अर्थात् दुःख निरोध मार्ग (अष्टांगिक मार्ग), बौद्ध धर्म का निचोड़ है।

बुद्ध की सारी विचाराधारा किसी न किसी रूप में इन चार आर्य सत्यों से प्रभावित रही है। बौद्ध धर्म को कई राजाओं ने आश्रय दिया। प्रसिद्ध मौर्य शासक अशोक ने अपने प्रचारकों के माध्यम से विदेशों में इसे फैलाकर इसे विश्व धर्म में भी बदल दिया था। आगे चलकर बौद्ध धर्म में व्याप्त बुराइयां फैल गई थी जिस कारण 12वीं शताब्दी तक बौद्ध धर्म भारत से लगभग विलुप्त हो गया, लेकिन बौद्ध धर्म का वर्णव्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ा। ब्राह्मणों ने अपने धर्म में सुधार किया। महिलाओं और शूद्रों को हिन्दू धर्म में उचित स्थान दिया गया जिस वजह से इनकी स्थिति में कुछ सुधार हुआ तथा कई सुधार की कोशिशें होती रही। वैदिक धर्म ने पशु धन की रक्षा की आवश्यकता पर बल दिया।

संदर्भ सूची

1. ऋग्वेद 10.90.12।
2. वहीं 9.112.3।
3. शर्मा रामशरण, 2018, *भारत का प्राचीन इतिहास,* ओक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस इंडिया, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 119।
4. थापर, रोमिला, 2013, *प्राचीन भारत का इतिहास,* एस. चन्द. एण्ड कंपनी, प्रा. लि. नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 113।
5. अंगुत्तर निकाय, मज्झिम निकाय, धम्मपद आदि।
6. धम्मपद, 8.8।
7. अंगुत्तर निकाय, 3.120, *जातक* 1.4–37।
8. शर्मा रामशरण, पूर्वोक्त, पृष्ठ 135।
9. वही पृष्ठ 135।
10. अशोक भीम प्रिय, गुप्तों के काल के बाद बौद्ध धर्म एवं संस्कृति, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय।
11. वही।
12. शर्मा साधना, 1992, *कुषाणकालीन समाज,* आत्माराम एंड संस, दिल्ली, पृष्ठ संख्या 67।
13. दिव्यवदान, 324/17–22।
14. वही 331/5–6, 328/5–6।
15. अशोक भीम प्रिय, गुप्तों के काल के बाद बौद्ध धर्म एवं संस्कृति, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय।

16. पी.बी. बापट, *बौद्ध धर्म के पच्चीस सौ वर्ष,* प्राक्कथन।
17. दिव्यावदान, 323 / 14, 332 / 17।
18. अशोक भीम प्रिय, गुप्तों के काल के बाद बौद्ध धर्म एवं संस्कृति, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय।
19. Larping, Phra Uten, 2006, The Theravada buddhist view of women a philosophical study, University of Mysore.
20. अशोक भीम प्रिय, गुप्तों के काल के बाद बौद्ध धर्म एवं संस्कृति, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय।
21. अग्रवाल प्रियंका, 2011, आधुनिक भारत में बौद्ध धर्म का पुनरुद्धार, पंजाब विश्वविद्यालय।
22. लाल अंगने, सं. बौ. सा. भा. जी. पृष्ठ 201।
23. अशोक का बारहवां शिलालेख।
24. अंबेडकर भीमराव, बुद्ध एंड हिज धम्मा, पृष्ठ 351।
25. अशोक भीम प्रिय, गुप्तों के काल के बाद बौद्ध धर्म एवं संस्कृति, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय।
26. अंबेडकर भीमराव, बुद्ध एंड हिज धम्मा, पृष्ठ 351।
27. अशोक भीम प्रिय, गुप्तों के काल के बाद बौद्ध धर्म एवं संस्कृति, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय।
28. Rotman Andy, Divyavadana, Wisdom,publication 277.
29. Coomaraswamy Ananda K., Hinduism and Buddhism, World Press, page 201.
30. कोसाम्बी, धर्मानंद, 2008, *भगवान बुद्ध : जीवन और दर्शन,* लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद पृष्ठ–213।
31. वहीं पृष्ठ संख्या 214।
32. वहीं पृष्ठ संख्या 215।
33. विष्णु पुराण, तृतीय अंश, अध्याय 17–18।

––==00==––